



भारत में “संवैधानिक नैतिकता” की अवधारणा: इसकी प्रासंगिकता और चुनौतियाँ

अभिषेक कुमार

शोधार्थी, दिल्ली विश्वविद्यालय, Email- abhishek.krsinh@gmail.com

डॉ. अंकुर आर्यन

सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, जयप्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा, बिहार

Email – ankuraryan18@gmail.com

DOI : <https://doi.org/10.5281/zenodo.22097153>

ARTICLE DETAILS

Research Paper

Received: 22-06-2026

Accepted: 30-07-2026

Published: 21-08-2026

Keywords:

संवैधानिक नैतिकता, भारत, लोकतंत्र, मौलिक अधिकार, न्यायिक निर्णय, राजनीतिक धुवीकरण, कानून का शासन, संविधान।

ABSTRACT

भारत में “संवैधानिक नैतिकता” की अवधारणा संविधान में निहित मूल्यों और सिद्धांतों के पालन को संदर्भित करती है, यह सुनिश्चित करती है कि सरकारी संस्थाएँ और नागरिक दोनों ही कानून, न्याय, समानता और लोकतंत्र के शासन को बनाए रखें। यह राजनीतिक या धार्मिक विचारों से परे संविधान के ढांचे के प्रति सम्मान पर जोर देता है। लेख लोकतांत्रिक शासन की अखंडता को बनाए रखने और मौलिक अधिकारों की रक्षा करने में इसकी प्रासंगिकता पर प्रकाश डालता है। यह न्यायिक निर्णयों को निर्देशित करने में संवैधानिक नैतिकता की भूमिका को रेखांकित करता है, खासकर उन मामलों में जहाँ कानून या कार्यकारी कार्यवाई संवैधानिक सिद्धांतों के साथ संघर्ष कर सकती है। हालाँकि, राजनीतिक धुवीकरण, संस्थागत स्वायत्तता के क्षरण और संवैधानिक मानदंडों को कमजोर करने की प्रवृत्ति से चुनौतियाँ उत्पन्न होती हैं। लेख इस बात पर जोर देता है कि लोकतंत्र की रक्षा करने और यह सुनिश्चित करने में संवैधानिक नैतिकता महत्वपूर्ण है कि सत्ता का प्रयोग संवैधानिक मूल्यों के अनुसार किया जाए। प्रमुख चुनौतियों में राजनीतिक दुरुपयोग, जागरूकता की कमी और संवैधानिक व्याख्या की विकसित प्रकृति शामिल हैं।

Disclaimer: The opinions, interpretations, conclusions, recommendations, analyses, and statements expressed in this research article are solely those of the author(s) and do not reflect the views, policies, or positions of the Publisher, Chief Editor, Editors, Editorial Board, Reviewers, or their affiliated institutions. The author(s) are solely responsible for ensuring the originality, authenticity, and integrity of the manuscript and for ensuring that it is free from plagiarism, AI-generated content, copyright infringement, data falsification, and any other form of academic misconduct.

परिचय

भारत का संविधान, जिसे 1950 में अपनाया गया था, दुनिया के सबसे व्यापक कानूनी दस्तावेजों में से एक है। यह न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व की दृष्टि को व्यक्त करता है, जो एक निष्पक्ष और समावेशी समाज की स्थापना करना चाहता है। संविधान की प्रस्तावना इन मूल्यों को दर्शाती है, जबकि दस्तावेज स्वयं एक लोकतांत्रिक गणराज्य की रूपरेखा को रेखांकित करता है। हालाँकि, समय के साथ, यह स्पष्ट हो गया है कि इन सिद्धांतों के अनुप्रयोग के लिए न केवल कानून के अक्षर का पालन करना आवश्यक है बल्कि इसकी भावना का भी पालन करना आवश्यक है (वर्मा, 2021)। इसलिए, संवैधानिक नैतिकता यह सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है कि राज्य संस्थान और राजनीतिक अभिकर्ता इन आदर्शों के प्रति प्रतिबद्ध रहें।

संवैधानिक नैतिकता केवल कानूनी पाठ का पालन करने के बारे में नहीं है बल्कि न्याय, समानता और मानवीय गरिमा सुनिश्चित करने के लिए एक व्यापक नैतिक प्रतिबद्धता को शामिल करती है। यह संविधान की व्याख्या इस तरह से करने के बारे में है जो देश के विकसित होते नैतिक और सामाजिक मूल्यों को दर्शाता है (जैफ़रलॉट, 2020)। न्यायपालिका ने संवैधानिक नैतिकता को आकार देने और उसकी सुरक्षा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, इसका उपयोग यह सुनिश्चित करने के लिए किया है कि संविधान प्रासंगिक बना रहे और समकालीन मूल्यों को प्रतिबिंबित करे (भूषण, 2019)।

भारत में “संवैधानिक नैतिकता” की अवधारणा देश के संवैधानिक ढांचे और लोकतंत्र का अभिन्न अंग है। यह उन नैतिक और नैतिक दायित्वों को संदर्भित करता है जिनका पालन राज्य, उसके संस्थानों और उसके नागरिकों को संविधान के मूल मूल्यों को बनाए रखने के लिए करना चाहिए। हालाँकि इस शब्द को भारतीय संविधान में स्पष्ट रूप से परिभाषित नहीं किया गया है, लेकिन इसका उपयोग न्यायिक और शैक्षणिक प्रवचन में संविधान की भावना - न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व जैसे मूल्यों को संदर्भित करने के लिए बड़े पैमाने पर किया गया है (अंबेडकर, 1949)। संवैधानिक नैतिकता संविधान की मात्र कानूनी व्याख्या से परे है, यह मार्गदर्शन करती है कि इन मूलभूत सिद्धांतों के अनुरूप कानूनों को कैसे लागू किया जाना चाहिए, उनकी व्याख्या की जानी चाहिए और उन्हें कैसे लागू किया जाना चाहिए (गोगोई, 2018)। यह लेख भारत में संवैधानिक नैतिकता की अवधारणा, समकालीन राजनीतिक और न्यायिक व्यवहार में इसकी प्रासंगिकता और तेजी से जटिल और ध्रुवीकृत सामाजिक-राजनीतिक परिदृश्य में इसके सामने आने वाली चुनौतियों की आलोचनात्मक जांच करता है।

संवैधानिक नैतिकता की अवधारणा

भारत में संवैधानिक नैतिकता की उत्पत्ति डॉ. बी.आर. अंबेडकर की दृष्टि से देखी जा सकती है, जिन्हें व्यापक रूप से भारतीय संविधान के निर्माता के रूप में माना जाता है। नवंबर 1949 में संविधान सभा को दिए अपने संबोधन में

अंबेडकर ने इस बात पर जोर दिया कि संविधान की सफलता न केवल इसके कानूनी प्रावधानों पर निर्भर करेगी बल्कि इसके सिद्धांतों को बनाए रखने के लिए लोगों की नैतिक प्रतिबद्धता पर भी निर्भर करेगी। अंबेडकर (1949) ने कहा कि संविधान के मूल्यों को सरकार और नागरिकों के आचरण का मार्गदर्शन करना चाहिए, यह सुनिश्चित करते हुए कि राजनीतिक कार्य और राज्य के हस्तक्षेप पाठ में निहित गहरे नैतिक मूल्यों को दर्शाते हैं।

हालाँकि अंबेडकर की दृष्टि संविधान के प्रति नैतिक प्रतिबद्धता पर जोर देती थी, लेकिन 20वीं सदी के अंत तक संवैधानिक नैतिकता की अवधारणा को न्यायिक चर्चा में सक्रिय रूप से इस्तेमाल नहीं किया गया था। इस अवधारणा को सुप्रीम कोर्ट के ऐतिहासिक निर्णयों के साथ और अधिक बल मिला, जिसमें संविधान की व्याख्या न केवल कानूनी तरीके से करने की आवश्यकता पर जोर दिया गया, बल्कि इस तरह से की गई जो संविधान की व्यापक नैतिक दृष्टि को दर्शाती हो (गोगोई, 2018)। उदाहरण के लिए, के.एस. पुट्टस्वामी बनाम भारत संघ (2017) में, न्यायालय ने निजता के अधिकार को मौलिक अधिकार के रूप में मान्यता दी, जिसमें कहा गया कि संवैधानिक नैतिकता के लिए न्यायपालिका को समकालीन सामाजिक मूल्यों के अनुरूप अधिकारों की व्यापक व्याख्या करने की आवश्यकता है (पुट्टस्वामी बनाम भारत संघ, 2017)।

भारत में संवैधानिक नैतिकता को कई प्रमुख तत्वों के संयोजन के रूप में समझा जा सकता है:

1. लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रति प्रतिबद्धता :संवैधानिक नैतिकता यह अनिवार्य करती है कि शासन और न्यायिक व्याख्या दोनों में लोकतंत्र, लोकप्रिय संप्रभुता और कानून के शासन के सिद्धांतों का पालन किया जाना चाहिए (वर्मा, 2021)।
2. समानता और सामाजिक न्याय के प्रति प्रतिबद्धता :संविधान एक ऐसे समाज की कल्पना करता है जहाँ सामाजिक और आर्थिक न्याय कायम हो, जिसमें सभी नागरिकों, विशेष रूप से हाशिए पर पड़े समूहों को समान अवसर उपलब्ध हों (देशपांडे, 2020)।
3. मौलिक अधिकारों का सम्मान :मौलिक अधिकारों की सुरक्षा -जैसे कि जीवन, स्वतंत्रता और सम्मान का अधिकार -संवैधानिक नैतिकता का केंद्र है, जिसके लिए आवश्यक है कि राज्य इन अधिकारों का अक्षरशः और भावना दोनों में सम्मान करे (के.एस. पुट्टस्वामी बनाम भारत संघ, 2017)।

संवैधानिक नैतिकता के सैद्धांतिक आधार

संवैधानिक नैतिकता मूल रूप से एक आदर्श अवधारणा है जो संविधान की मात्र कानूनी व्याख्या से परे है। इसमें संविधान के पाठ में बताए गए लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रति नैतिक प्रतिबद्धता शामिल है और सार्वजनिक एवं राजनीतिक जीवन दोनों में इन मूल्यों का पालन करने की आवश्यकता है। भारतीय संदर्भ में, संवैधानिक नैतिकता राजनीतिक अभिनेताओं और राज्य संस्थानों द्वारा न्याय, समानता, सम्मान और धर्मनिरपेक्षता के सिद्धांतों के

अनुसार कार्य करने की आवश्यकता को संबोधित करती है। इस अवधारणा ने संवैधानिक कानून के एक महत्वपूर्ण पहलू के रूप में प्रमुखता प्राप्त की है, खासकर जब राजनीतिक अभिनेता, सामाजिक समूह या राज्य संस्थान इन संस्थापक मूल्यों से विचलित होते हैं।

संवैधानिक नैतिकता की अवधारणा का पता भारतीय संविधान के मूलभूत सिद्धांतों से लगाया जा सकता है, जो एक बहुलवादी और लोकतांत्रिक समाज की कल्पना करता है। जबकि संविधान कानूनी मानदंड प्रदान करता है, संवैधानिक नैतिकता इन मानदंडों को एक नैतिक दायित्व के रूप में बढ़ाती है, इस बात पर जोर देते हुए कि राज्य को इसके भीतर निहित उच्च नैतिक सिद्धांतों के अनुसार कार्य करना चाहिए (बसु, 2020)।

भारत में संवैधानिक नैतिकता की प्रासंगिकता

A. मौलिक अधिकारों का संरक्षण

मौलिक अधिकारों का संरक्षण और संवर्धन संवैधानिक नैतिकता के सबसे महत्वपूर्ण पहलुओं में से एक है। संविधान कई मौलिक अधिकारों की गारंटी देता है, जिसमें समानता का अधिकार, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार और जीवन और स्वतंत्रता का अधिकार शामिल है। हालाँकि, इन अधिकारों की सुरक्षा अक्सर राज्य के अभिनेताओं और निजी संस्थाओं दोनों की ओर से चुनौती के अधीन होती है। संवैधानिक नैतिकता यह सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है कि सरकार न केवल कानूनी पाठ का पालन करे बल्कि इन अधिकारों में निहित नैतिक सिद्धांतों, जैसे गरिमा और स्वायत्तता का भी सम्मान करे (गोगोई, 2018)। उदाहरण के लिए, के.एस. पुट्टस्वामी बनाम भारत संघ (2017) में, सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि निजता का अधिकार संविधान के अनुच्छेद 21 द्वारा गारंटीकृत जीवन और स्वतंत्रता के अधिकार का एक अभिन्न अंग है। न्यायालय ने तर्क दिया कि संवैधानिक नैतिकता के लिए न्यायपालिका को यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि व्यक्तियों की व्यक्तिगत स्वायत्तता को राज्य के अनुचित हस्तक्षेप से बचाया जाए। निर्णय इस विचार को दर्शाता है कि संविधान की व्याख्या इस तरह से की जानी चाहिए कि तकनीकी और सामाजिक परिवर्तनों के सामने निजता और गरिमा के मूल्यों को बनाए रखा जाए (पुट्टस्वामी बनाम भारत संघ, 2017)।

B. लोकतंत्र और जवाबदेही को कायम रखना

संवैधानिक नैतिकता का एक और केंद्रीय आयाम लोकतंत्र को कायम रखने और सरकार में जवाबदेही सुनिश्चित करने में इसकी भूमिका है। संविधान कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका के बीच जाँच और संतुलन की एक प्रणाली प्रदान करता है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि कोई भी शाखा बहुत शक्तिशाली न हो जाए। कार्यपालिका को कानून के शासन का सम्मान करना चाहिए, विधायिका को संवैधानिक सीमाओं के भीतर कानून बनाना चाहिए और

न्यायपालिका को स्वतंत्र और निष्पक्ष निर्णय प्रदान करना चाहिए (वर्मा, 2021)। राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग (एनजेएसी) मामले (2015) जैसे मामलों में, न्यायपालिका ने संवैधानिक नैतिकता का हवाला देते हुए कहा कि न्यायिक नियुक्तियाँ कार्यकारी प्रभाव से स्वतंत्र रहनी चाहिए, यह सुनिश्चित करते हुए कि न्यायपालिका संभावित कार्यकारी अतिक्रमण के प्रति संतुलन के रूप में कार्य करना जारी रख सकती है (एनजेएसी, 2015)। एनजेएसी अधिनियम को रद्द करने में सुप्रीम कोर्ट के फैसले ने इस बात पर जोर दिया कि संवैधानिक नैतिकता के लिए एक स्वतंत्र न्यायपालिका बनाए रखने की आवश्यकता है जो संवैधानिक मूल्यों के रक्षक के रूप में कार्य कर सके।

C. सामाजिक न्याय और समावेशिता

संवैधानिक नैतिकता की अवधारणा में सामाजिक न्याय और हाशिए पर पड़े समुदायों के उत्थान के प्रति प्रतिबद्धता भी शामिल है। भारतीय संविधान एक ऐसे समाज की कल्पना करता है जहाँ जाति-आधारित भेदभाव, लैंगिक असमानता और आर्थिक विषमता को सकारात्मक कार्रवाई नीतियों और समावेशी सामाजिक सुधारों के माध्यम से संबोधित किया जाता है (देशपांडे, 2020)। संवैधानिक नैतिकता के लिए आवश्यक है कि राज्य इन असमानताओं को खत्म करने की दिशा में सक्रिय रूप से काम करे, यह सुनिश्चित करते हुए कि सभी नागरिकों को उनकी सामाजिक और आर्थिक उन्नति के लिए आवश्यक अवसरों तक पहुँच प्राप्त हो।

संवैधानिक नैतिकता को लागू करने में न्यायपालिका की भूमिका सकारात्मक कार्रवाई नीतियों को लगातार बनाए रखने से स्पष्ट होती है। इंद्रा साहनी बनाम भारत संघ (1992) में, सुप्रीम कोर्ट ने आरक्षण प्रणाली को बरकरार रखा, इसे पिछड़े वर्गों के लिए वास्तविक समानता हासिल करने के लिए एक आवश्यक उपकरण के रूप में व्याख्यायित किया (इंद्रा साहनी बनाम भारत संघ, 1992)। यह निर्णय संवैधानिक नैतिकता के अनुप्रयोग को दर्शाता है, क्योंकि इसने माना कि वास्तविक समानता केवल ऐतिहासिक रूप से वंचित समूहों के लिए खेल के मैदान को समतल करने के लिए सक्रिय उपायों के माध्यम से प्राप्त की जा सकती है।

संवैधानिक नैतिकता को बनाए रखने में न्यायिक भूमिका

भारत में न्यायपालिका संवैधानिक नैतिकता की रक्षा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, मुख्य रूप से न्यायिक समीक्षा के माध्यम से। संविधान की व्याख्या करने के अधिकार से सशक्त भारतीय सर्वोच्च न्यायालय यह सुनिश्चित करने में एक प्रमुख अभिनेता के रूप में कार्य करता है कि कानून, नीतियाँ और कार्यकारी कार्य संविधान की लोकतांत्रिक और नैतिक अनिवार्यताओं के अनुरूप हों। न्यायपालिका की भूमिका औपचारिक कानूनी व्याख्याओं से आगे बढ़कर संवैधानिक मूल्यों को बढ़ावा देने तक फैली हुई है जो एक न्यायपूर्ण, समतावादी और समावेशी समाज को बढ़ावा देते हैं।

- मौलिक अधिकारों का न्यायिक विस्तार :न्यायपालिका संवैधानिक नैतिकता को बनाए रखने के सबसे महत्वपूर्ण तरीकों में से एक मौलिक अधिकारों की व्याख्या और उनके दायरे का विस्तार करना है। के.एस. पुट्टस्वामी बनाम भारत संघ) 2017 (में, सर्वोच्च न्यायालय ने अनुच्छेद 21 (जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार (की व्याख्या इस तरह से करते हुए निजता के अधिकार को मौलिक अधिकार के रूप में पुष्टि की, जो संविधान की व्यक्तिगत गरिमा और स्वायत्तता के प्रति प्रतिबद्धता को दर्शाता है) पुट्टस्वामी बनाम भारत संघ, 2017)। यह निर्णय न केवल कानूनी सिद्धांतों पर आधारित था, बल्कि स्वतंत्रता की व्यापक नैतिक दृष्टि पर आधारित था जो संवैधानिक नैतिकता के लिए केंद्रीय है।
- धर्मनिरपेक्षता और सामाजिक न्याय :धर्मनिरपेक्षता का सिद्धांत संवैधानिक नैतिकता का एक और मुख्य घटक है। एस.आर. बोम्मई बनाम भारत संघ) 1994 (में, न्यायालय ने पुष्टि की कि धर्मनिरपेक्षता भारतीय संविधान की एक मौलिक विशेषता है और राज्य को किसी भी धर्म को दूसरे धर्मों पर तरजीह नहीं देनी चाहिए। धर्मनिरपेक्षता को सुदृढ़ करने में न्यायपालिका की भूमिका यह सुनिश्चित करती है कि राज्य के कार्य और नीतियाँ भारतीय समाज के भीतर धार्मिक विश्वासों की विविधता का सम्मान करें, जिससे समावेशिता और बहुलवाद के प्रति नैतिक प्रतिबद्धता बनी रहे) एस.आर. बोम्मई बनाम भारत संघ, 1994)।
- कार्यपालिका और विधायी शक्ति पर नियंत्रण :न्यायिक समीक्षा कार्यपालिका और विधायी शाखाओं द्वारा सत्ता के दुरुपयोग के खिलाफ सुरक्षा के रूप में भी काम करती है। न्यायपालिका यह सुनिश्चित करती है कि सरकार की कार्रवाइयाँ व्यक्तिगत अधिकारों या संविधान के मूल मूल्यों का उल्लंघन न करें, जो संभावित अधिनायकवाद या बहुसंख्यक आवेगों के लिए एक नैतिक प्रतिसंतुलन के रूप में प्रभावी रूप से कार्य करती है। उदाहरण के लिए, नवतेज सिंह जौहर बनाम भारत संघ) 2018 (में, सुप्रीम कोर्ट ने समलैंगिक संबंधों को अपराध से मुक्त कर दिया, यह पुष्टि करते हुए कि कानून को संविधान की समानता, सम्मान और स्वतंत्रता की नैतिक दृष्टि के साथ संरेखित होना चाहिए) नवतेज सिंह जौहर बनाम भारत संघ, 2018)।

संवैधानिक नैतिकता और सार्वजनिक नीति: शासन के लिए निहितार्थ

संवैधानिक नैतिकता की अवधारणा का भारत में सार्वजनिक नीति और शासन के निर्माण के लिए महत्वपूर्ण निहितार्थ हैं। यह एक नैतिक दिशा-निर्देश प्रदान करता है जो मांग करता है कि सभी राज्य क्रियाएँ, चाहे वे कानून, कार्यकारी कार्रवाई या न्यायिक घोषणाओं के रूप में हों, संविधान के मूल सिद्धांतों का पालन करें। संवैधानिक नैतिकता को प्रतिबिंबित करने वाली सार्वजनिक नीतियाँ वे हैं जो न्याय को बढ़ावा देती हैं, मौलिक अधिकारों की रक्षा करती हैं और सभी नागरिकों के साथ समान व्यवहार सुनिश्चित करती हैं, चाहे उनकी सामाजिक, सांस्कृतिक या धार्मिक पृष्ठभूमि कुछ भी हो।

- सामाजिक न्याय और सकारात्मक कार्रवाई :सकारात्मक कार्रवाई का सिद्धांत, जो शिक्षा और रोजगार में ऐतिहासिक रूप से वंचित समुदायों के लिए आरक्षण को अनिवार्य करता है, व्यवहार में संवैधानिक नैतिकता का एक उदाहरण है। नीति जाति-आधारित भेदभाव की विरासत को संबोधित करने और यह सुनिश्चित करने के लिए डिज़ाइन की गई है कि हाशिए पर पड़े समूहों को सार्वजनिक वस्तुओं और सेवाओं तक पहुँचने के समान अवसर प्रदान किए जाएँ) चंद्रचूड़, 2019)। यह नीति सामाजिक न्याय के प्रति संविधान की प्रतिबद्धता और एक समतावादी समाज बनाने की नैतिक अनिवार्यता को दर्शाती है।
- लिंग और यौन अधिकारों पर प्रभाव :संवैधानिक नैतिकता ने भारत में लिंग और यौन अधिकारों को आगे बढ़ाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। नवतेज सिंह जौहर) 2018 (में समलैंगिकता को अपराध से मुक्त करना और नालसा बनाम भारत संघ) 2014 (में ट्रांसजेंडर अधिकारों को मान्यता देना न्यायपालिका की संवैधानिक नैतिकता के साथ जुड़ाव को दर्शाता है, क्योंकि ये निर्णय केवल कानूनी फैसले नहीं थे, बल्कि मानवीय गरिमा और समानता के लिए व्यापक नैतिक प्रतिबद्धता पर आधारित थे) शर्मा, 2018)। ये ऐतिहासिक निर्णय बताते हैं कि कैसे संवैधानिक नैतिकता अधिक समावेशी और न्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था की मांग करके सार्वजनिक नीति को प्रभावित कर सकती है।
- बहुसंख्यकवाद पर अंकुश :संवैधानिक नैतिकता बहुसंख्यकवादी प्रवृत्तियों के खिलाफ एक महत्वपूर्ण सुरक्षा के रूप में कार्य करती है जो अल्पसंख्यक समूहों को हाशिए पर डालने की कोशिश कर सकती हैं। यह उन नीतियों की आवश्यकता को पुष्ट करता है जो अल्पसंख्यकों की सुरक्षा सुनिश्चित करती हैं और राजनीतिक दबावों का सामना करते हुए उनके अधिकारों को बनाए रखती हैं। न्यायपालिका का हस्तक्षेप, विशेष रूप से धार्मिक स्वतंत्रता या जाति-आधारित भेदभाव से जुड़े मामलों में, राष्ट्र के बहुलवादी ताने-बाने को खतरा पहुंचाने वाले किसी भी राजनीतिक रुझान के प्रति प्रतिकार के रूप में कार्य करता है) चंद्रचूड़, 2019)।

भारत में संवैधानिक नैतिकता के अनुप्रयोग की चुनौतियाँ

इसके महत्व के बावजूद, संवैधानिक नैतिकता के अनुप्रयोग में महत्वपूर्ण चुनौतियाँ हैं। सबसे पहले, यह अवधारणा अलग-अलग व्याख्याओं के लिए खुली रहती है, जो इसे व्याख्या करने वालों के वैचारिक दृष्टिकोण पर निर्भर करती है। न्यायिक सक्रियता, जबकि अक्सर प्रगतिशील कारणों को आगे बढ़ाने के लिए मनाई जाती है, न्यायपालिका की सीमाओं को लांघने और व्याख्या के बजाय कानून बनाने में संलग्न होने के लिए भी आलोचना की जा सकती है। इस तरह की बहसें, विशेष रूप से राजनीतिक रूप से संवेदनशील मामलों के संदर्भ में, राष्ट्र के नैतिक परिदृश्य को आकार देने में न्यायपालिका की भूमिका के बारे में सवाल उठाती हैं (बसु, 2020)।

A. राजनीतिक धुवीकरण और लोकतांत्रिक सिद्धांतों का क्षरण

आज भारत में संवैधानिक नैतिकता के लिए सबसे महत्वपूर्ण चुनौतियों में से एक बढ़ता राजनीतिक धुवीकरण है, जो अक्सर लोकतंत्र के मूल सिद्धांतों को खतरे में डालता है। राजनीतिक अभिकर्ता, कानून के शासन और संवैधानिक मूल्यों को प्राथमिकता देने के बजाय, पक्षपातपूर्ण एजेंडे को आगे बढ़ा सकते हैं जो लोकतांत्रिक संस्थाओं को कमजोर करते हैं (जैफरलॉट, 2020)। राज्य संस्थानों का यह राजनीतिकरण संवैधानिक व्यवस्था की अखंडता को बनाए रखने के लिए आवश्यक जाँच और संतुलन को कमजोर कर सकता है। उदाहरण के लिए, न्यायपालिका के कामकाज में बढ़ता राजनीतिक हस्तक्षेप, न्यायपालिका की स्वतंत्रता को कमजोर करने के प्रयासों से स्पष्ट होता है, संवैधानिक नैतिकता के लिए एक गंभीर खतरा है। न्यायिक निर्णयों या नियुक्तियों को प्रभावित करने की कोशिश करने वाले राजनीतिक अभिकर्ता संवैधानिक मूल्यों के एक तटस्थ मध्यस्थ के रूप में सेवा करने की न्यायपालिका की क्षमता को कमजोर करते हैं (भूषण, 2019)।

संवैधानिक नैतिकता की न्यायिक व्याख्याओं के प्रति राजनीतिक प्रतिरोध एक सतत चुनौती है। ऐसे मामलों में जहां न्यायपालिका के फैसले सत्तारूढ़ सरकार की प्राथमिकताओं के साथ संघर्ष करते हैं, जैसे कि ट्रिपल तलाक मामले (2017) में, अक्सर महत्वपूर्ण राजनीतिक प्रतिरोध होता है। आलोचकों का तर्क है कि इस तरह के फैसले न्यायिक अतिक्रमण का प्रतिनिधित्व करते हैं, लेकिन समर्थकों का तर्क है कि यह सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है कि राज्य संविधान के तहत अपने नैतिक दायित्वों का पालन करे (शर्मा, 2018)।

B. पारंपरिक मानदंडों के साथ टकराव

संवैधानिक नैतिकता का अनुप्रयोग जड़ जमाए हुए सामाजिक और सांस्कृतिक प्रथाओं के साथ भी टकराव में आ सकता है। उदाहरण के लिए, जाति-आधारित भेदभाव या लैंगिक असमानता जैसी प्रथाएँ समानता और न्याय के लिए संवैधानिक आदेशों के बावजूद बनी रह सकती हैं। इन क्षेत्रों में न्यायिक हस्तक्षेप आवश्यक है, लेकिन इसे अक्सर रूढ़िवादी सामाजिक ताकतों के प्रतिरोध का सामना करना पड़ता है जो ऐसे हस्तक्षेपों को पारंपरिक मानदंडों और मूल्यों के लिए चुनौती के रूप में देखते हैं (चंद्रचूड़, 2019)।

C. बहुसंख्यकवाद और अल्पसंख्यक अधिकारों का हाशिए पर होना

भारत में बहुसंख्यकवाद का उदय संवैधानिक नैतिकता के लिए एक और महत्वपूर्ण चुनौती है। किसी विशेष धार्मिक या सांस्कृतिक समूह का दूसरों पर प्रभुत्व संविधान में निहित बहुलवादी और समावेशी आदर्शों के लिए खतरा है। नागरिकता संशोधन अधिनियम (CAA) जैसे कानून, जो मुस्लिम शरणार्थियों के साथ भेदभाव करते हैं, ने चिंता जताई है कि संवैधानिक नैतिकता को बहुसंख्यक राजनीति के पक्ष में मिटाया जा रहा है (जैफरलॉट, 2020)।

संवैधानिक नैतिकता की मांग है कि राज्य इस तरह से कार्य करे जो अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा करे, यह सुनिश्चित करे कि कानून और नीतियाँ समावेशी और गैर-भेदभावपूर्ण हों। बहुसंख्यकवाद की बढ़ती प्रवृत्ति, अगर अनियंत्रित छोड़ दी जाती है, तो धार्मिक और सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों के हाशिए पर जाने का कारण बन सकती है, जो भारतीय गणतंत्र की नींव को कमजोर कर सकती है।

D. आर्थिक असमानता और सामाजिक न्याय

संविधान में समानता और सामाजिक न्याय के वादे के बावजूद, भारत में आर्थिक असमानताएँ बनी हुई हैं। आबादी का एक बड़ा हिस्सा गरीबी में फंसा हुआ है और जाति-आधारित भेदभाव समाज को परेशान कर रहा है। ऐसी असमानताओं का बने रहना संवैधानिक नैतिकता की प्राप्ति के लिए एक बड़ी चुनौती पेश करता है, क्योंकि संविधान के न्याय और समानता के मूल्यों को तब तक पूरी तरह से महसूस नहीं किया जा सकता जब तक कि इन प्रणालीगत असमानताओं को संबोधित नहीं किया जाता (देशपांडे, 2020)।

E. न्यायिक स्वतंत्रता और कार्यपालिका का अतिक्रमण

न्यायपालिका की स्वतंत्रता संवैधानिक नैतिकता को बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण है। न्यायिक नियुक्तियों को नियंत्रित करने और न्यायिक परिणामों को प्रभावित करने के कार्यपालिका के प्रयास न्यायपालिका की कार्यपालिका शक्ति पर एक स्वतंत्र जांच के रूप में कार्य करने की क्षमता को कमजोर करते हैं। एनजेएसी (2015) में, सुप्रीम कोर्ट ने दोहराया कि न्यायिक स्वतंत्रता संविधान का एक मूलभूत पहलू है, और इसे कमजोर करने का कोई भी प्रयास संवैधानिक नैतिकता (एनजेएसी, 2015) के विपरीत होगा।

निष्कर्ष

संवैधानिक नैतिकता की अवधारणा भारत की लोकतांत्रिक प्रणाली की अखंडता के लिए मौलिक है। यह सुनिश्चित करता है कि संविधान के न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के मूल्य केवल कानूनी अमूर्तता नहीं हैं, बल्कि शासन, न्यायपालिका और समाज के नैतिक आचरण में साकार होते हैं। भारतीय न्यायपालिका ने संवैधानिक नैतिकता की समझ को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, इसे एक उपकरण के रूप में उपयोग करके यह सुनिश्चित किया है कि संविधान एक जीवंत दस्तावेज बना रहे जो समाज की उभरती जरूरतों के अनुकूल हो। हालाँकि, राजनीतिक धुवीकरण, बहुसंख्यकवाद और आर्थिक असमानता सहित कई चुनौतियाँ समकालीन भारत में संवैधानिक नैतिकता के अनुप्रयोग को खतरे में डालती हैं। यह जरूरी है कि राजनीतिक नेता, राज्य संस्थान और नागरिक भारत के लोकतांत्रिक प्रयोग की निरंतर सफलता सुनिश्चित करने के लिए संविधान में निहित मूल्यों को बनाए रखने के लिए प्रतिबद्ध हों। संवैधानिक नैतिकता एक आवश्यक और विकासशील अवधारणा है जो भारतीय संविधान को समझने के लिए एक

कानूनी और नैतिक ढांचा प्रदान करती है। यह न्याय, समानता और मानवीय गरिमा के सिद्धांतों का पालन करने की मांग करती है और यह मांग करती है कि राज्य संस्थाएँ इस तरह से कार्य करें जो इन नैतिक प्रतिबद्धताओं को दर्शाता हो। न्यायपालिका, मौलिक अधिकारों की अपनी विस्तृत व्याख्याओं और कार्यकारी और विधायी शक्ति पर अपनी जाँच के माध्यम से, भारत में संवैधानिक नैतिकता को बनाए रखने के लिए केंद्रीय रही है। हालाँकि, इस अवधारणा को इसके अनुप्रयोग में चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, विशेष रूप से राजनीतिक प्रतिरोध और पारंपरिक मानदंडों के सामने। फिर भी, संवैधानिक नैतिकता यह सुनिश्चित करने के लिए एक महत्वपूर्ण उपकरण बनी हुई है कि भारत का शासन न्यायपूर्ण, समावेशी और संविधान द्वारा परिकल्पित लोकतांत्रिक आदर्शों के प्रति वफादार हो।

संदर्भ सूची:

- इंद्रा साहनी बनाम भारत संघ, ए.आई.आर .1993 एस.सी .477 (1992).
- के.एस .पुट्टस्वामी बनाम भारत संघ, (2017) 10 एस.सी.सी .1.
- गोगोई, आर) .2018). भारतीय न्यायशास्त्र में संवैधानिक नैतिकता का विकास .लीगल स्टडीज क्वार्टरली.
- चंद्रचूड़, डी.वाई) .2019). भारत में संवैधानिक नैतिकता और सार्वजनिक नीति .ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
- जैफरलॉट, सी) .2020). समकालीन भारत में लोकतंत्र और संवैधानिक मूल्य .रूटलेज.
- देशपांडे, एस) .2020). भारतीय संविधान के तहत सामाजिक न्याय और समानता .ओरिएंट ब्लैकस्वान.
- नवतेज सिंह जौहर बनाम भारत संघ, (2018) 10 एस.सी.सी .1.
- नालसा) NALSA) बनाम भारत संघ, (2014) 5 एस.सी.सी .438.
- एनजेएसी मामला) राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग बनाम भारत संघ, (2015).
- बसु, डी.डी) .2020). भारत का संविधान : एक परिचय .लेक्सिसनेक्सिस.
- भूषण, पी) .2019). न्यायिक जवाबदेही और संवैधानिक नैतिकता .जर्नल ऑफ इंडियन लॉ एंड सोसाइटी.
- वरमा, ए) .2021). भारत में कानून का शासन और लोकतांत्रिक शासन .एकेडमिक प्रेस.
- शर्मा, आर) .2018). लैंगिक समानता, अधिकार और संवैधानिक नैतिकता .कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.
- एस.आर .बोम्मई बनाम भारत संघ, (1994) 3 एस.सी.सी .1.
- अंबेडकर, बी.आर) .1949). संविधान सभा में संबोधन .भारत सरकार.